**ओ३म्**

**‘जप व ध्यान से जीवात्मा के भीतर ही ईश्वर का प्रत्यक्ष होता है।’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

 ईश्वर को जानना व प्राप्त करना दो अलग-अलग बातें हैं। वेदों व वैदिक सहित्य में ईश्वर का ज्ञान व उसकी प्राप्ति के साधन बताये गये हैं। पहले ईश्वर के स्वरूप को जान लेते हैं और उसके बाद उपासना आदि साधनों पर चर्चा करेंगे। वेदों का स्वाध्याय साधारण अशिक्षित व अल्पशिक्षित मनुष्यों के लिए कुछ कठिन ही है। महर्षि दयानन्द ने **‘सत्यार्थ प्रकाश’** ग्रन्थ लिखकर व अन्य ग्रन्थों की रचना कर यह कार्य सरल कर दिया है। अब एक साधारण हिन्दी जानने वाला व्यक्ति भी ईश्वर के बारे में पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर सकता है। यह ज्ञान बड़े बड़े धार्मिक कथाओं के कथाकारों के सत्संग में जाकर तथा मत-मतान्तरों के बड़े बड़े धार्मिक ग्रन्थों को पढ़कर भी प्राप्त नहीं होता। आप लोगों से पूछे कि धर्म की परिभाषा क्या है? लोग तरह तरह के उत्तर देते हैं। सबसे सरल व सटीक उत्तर है **‘‘सत्याचरण”** अर्थात् सत्य के आचरण का नाम धर्म है। अब प्रश्न उत्पन्न होता है कि सत्य का आचरण क्या है, तो इसका उत्तर है कि जो विद्यायुक्त कार्य हैं वह सत्य हैं और जो अविद्यायुक्त कार्य हैं वह असत्य हैं। सत्य की एक परिभाषा यह भी है कि जो पदार्थ जैसा है उसे वैसा ही मानना सत्य और उससे विपरीत मानना असत्य होता है। वेदों में मनुष्यों के लिए जो आज्ञायें है वह विद्या से युक्त होने के कारण सब सत्य हैं और जो वेदों द्वारा निषिद्ध कार्य हैं वह असत्य कोटि में आते हैं। अतः वेद विहित कर्मों को करना धर्म और वेद निषिद्ध कर्मों को करना अधर्म व असत्याचार कहलाता है।

 ईश्वर का सत्य व यथार्थ स्वरूप कैसा है जिसे लेकर सारा संसार अनिश्चितता के आवरण से जकड़ा हुआ है। महर्षि दयानन्द ने यह कार्य सरल कर दिया है। सत्यार्थ प्रकाश के अन्त प्रस्तुत **‘‘स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाशः”** में उन्होंने ईश्वर की परिभाषा इस प्रकार से की है-**“ईश्वर कि जिस के ब्रह्म व परमात्मादि नाम है, जो सच्चिदानन्दादि लक्षणयुक्त है, जिस के गुण, कर्म, स्वभाव पवित्र हैं। जो सर्वज्ञ, निराकार, सर्वव्यापक, अजन्मा, अनन्त, सर्वशक्तिमान्, दयालु, न्यायकारी, सब सृष्टि का कर्त्ता, धर्त्ता, हर्त्ता, सब जीवों को कर्मानुसार सत्य न्याय से फलदाता आदि लक्षण युक्त है”**, उसी को परमेश्वर कहते हैं। ईश्वर सब जीवों को कर्मानुसार सत्य न्याय से फलों का दाता है। अतः जीवों का यथार्थ स्वरूप भी जानना आवश्यक है। महर्षि दयानन्द के अनुसार **जीव इच्छा, द्वेष, सुख, दुःख और ज्ञानादि गुणयुक्त अल्पज्ञ व नित्य है। वह यह भी बताते हैं** **परमेश्वर और जीव परस्पर व्याप्य-व्यापक, उपास्य-उपासक और पिता-पुत्र आदि सम्बन्धयुक्त हैं।** जीवों का कर्म फल प्रदाता होने से ईश्वर जीवों को कर्म करने के लिए मानव शरीर प्रदान करता है। मानव अपने जीवन में सत्यासत्य व पुण्य-पाप कर्मों को करता है। जीव द्वारा मानवयोनि में किये गये सभी पाप-पुण्य कर्मों का फल ईश्वर की व्यवस्था से समय आने पर मिलता है। योग दर्शन के अनुसार कर्माशय व प्रारब्ध के अनुसार ही जीवात्मा की जाति, आयु व भोग परमात्मा निश्चित कर उसे जन्म देता है। अतः अच्छी जाति, आयु और भोग की प्राप्ति के लिए मनुष्यों को पुण्य कर्म ही करने चाहिये, पाप कर्म अनजाने में हों जाये तो हों जाये परन्तु ज्ञानपूर्वक कोई असत्य या पाप कर्म नहीं करना चाहिये। यह ध्यान रखना चाहिये कि हमारे द्वारा किये गये सभी कर्म हमारी जाति, आयु और सुख-दुःख भोगों को प्रभावित करते हैं।

 परमात्मा ने जीवात्मा को मनुष्य जन्म दिया है और उसके सुख के लिये बहुत प्रकार की सामग्री की रचना कर हमें प्रदान की है। अतः जीवात्मा को ईश्वर के प्रति कृतज्ञ होना चाहिये। इस कृतज्ञता के प्रतिदान, ईश्वर से सुखों की प्राप्ति, दुःखों की निवृत्ति तथा धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष की प्राप्ति के लिए मनुष्य वा जीवात्मा को ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना, उपासना करनी उचित है। यदि वह विधि विधान के अनुसार ईश्वर की स्तुति-प्रार्थना-उपासना नहीं करेगा तो वह इससे होने वाले लाभों से वंचित होगा। कोई भी स्तुति-प्रार्थना-उपासना से होने वाले लाभों, यथा गुण-कर्म-स्वभाव में सुधार एवं आत्मिक बल की प्राप्ति, से वंचित होना नहीं चाहेगा। अतः ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना व उपासना की सत्य व यथार्थ विधि के लिये वेद, योग दर्शन व महर्षि दयानन्द लिखित सन्ध्योपासना विधि की ही शरण लेनी आवश्यक है। महर्षि दयानन्द प्रदत्त सन्ध्योपासना की विधि उनके वेद एवं योग के अत्युच्च ज्ञान व अनुभव का प्रमाण है। अनेक लोगों व संगठनों ने उसका अनुकरण कर अपनी इच्छानुसार उसमें परिवर्तन किये हैं जो कि उचित नहीं हैं। महर्षि लिखित यह उपासना पद्धति अपने आप में पूर्ण एवं लक्ष्य प्राप्ति में समर्थ व सफल है। अतः धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष के जिज्ञासुओं को इसी का अनुसरण करना चाहिये।

 प्रश्न है कि ईश्वर का साक्षात्कार मनुष्य को कब व कहां होता है? इसका उत्तर है कि ईश्वर के सर्वव्यापक होने व सदा जाग्रत अवस्था में होने के कारण, उसका साक्षात्कार मनुष्य जीवन के प्रथम क्षण से लेकर अन्तिम क्षण तक किसी भी समय प्राप्त किया जा सकता है। साक्षात्कार कहां व किस स्थान पर होता है, इसका उत्तर है कि सर्वव्यापक होने से वह हर स्थान पर है, अतः उसे प्राप्त करने के लिए काल्पनिक तीर्थ स्थानों जैसे किसी स्थान पर जाने की आवश्यकता नहीं है। ईश्वर का साक्षात्कार हमारे शरीर व इन्द्रियों को नहीं करना है क्योंकि अतीन्द्रिय होने से ईश्वर इन्द्रियों से प्राप्तव्य नहीं है। वह चेतन जीवात्मा को उसके वेदादि शास्त्रों के स्वाध्याय, सदकर्मों, जप व ध्यान आदि साधनों से ही प्राप्त होता है। **अतः ईश्वर का साक्षात्कार जीवात्मा को व्याप्य-व्यापक सम्बन्ध के कारण जीवात्मा में ही होना है और जीवात्मा में ही होगा।** साक्षात्कार की अवस्था में जीवात्मा का सम्बन्ध शरीर व इन्द्रियों से वियुक्त होना आवश्यक है। सभी इन्द्रियां आत्मा के स्वाधीन व विषयों से अयुक्त हों। जीवात्मा ईश्वर के सत्य ज्ञान से युक्त व उसके ध्यान में लगा हुआ हो। ईश्वर की कृपा हो अर्थात् जीवात्मा साक्षात्कार के लिये पात्र हो। ऐसा होने पर समाधि अवस्था में ईश्वर का जीवात्मा के भीतर साक्षात्कार होना सम्भव है वा होता है। जीवात्मा हमारे शरीर के हृदय प्रदेश में रहता है। महर्षि दयानन्द कृत ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका ग्रन्थ के उपासनाविषय में महर्षि दयानन्द ने शरीर में जीवात्मा के स्थान व साक्षात्कार का निम्न शब्दों में वर्णन किया है। वह लिखते हैं-**‘‘जिस समय (उपासक मनुष्य) सब साधनों से परमेश्वर की उपासना करके उसमें प्रवेश किया चाहें, उस समय इस रीति से करें कि कण्ठ के नीचे, दोनों स्तनों के बीच में और उदर से ऊपर जो हृदय देश है, जिसको ब्रह्मपुर अर्थात् परमेश्वर का नगर कहते हैं, उसके बीच में जो गर्त है, वह आनन्दस्वरूप परमेश्वर उसी प्रकाशित स्थान के बीच में खोज करने से (उपासक को) मिल जाता है। दूसरा उसके मिलने का कोई उत्तम स्थान वा मार्ग नहीं है।”** महर्षि दयानन्द ने यह वाक्य लिखने से पूर्व यह चेतावनी भी दी है कि यह उपासनायोग दुष्ट मनुष्य को सिद्ध नहीं होता, क्योंकि जब तक मनुष्य दुष्ट कामों से अलग होकर, अपने मन को शान्त और आत्मा को पुरुषार्थी नहीं करता तथा भीतर के व्यवहारों को शुद्ध नहीं करता, तब तक कितना ही पढ़़े वा सुने, उसको परमेश्वर की प्राप्ति नहीं हो सकती।

 महर्षि दयानन्द ने उपर्युक्त पंक्तियों में ईश्वर साक्षात्कार का जो वर्णन किया है वह विस्तृत वैदिक साहित्य में कहीं उपलब्ध नहीं है। उन्होंने यह पंक्तियां लिखकर मानवता का अत्युपकार व कल्याण किया है। इससे यह भी सिद्ध है कि ईश्वर की प्राप्ति व उसका साक्षात्कार सत्यकर्मों व ईश्वर की स्तुति-प्रार्थना-उपासना का परिणाम है। अन्य बाह्याडम्बरों, मूर्तिपूजा व अन्य कर्म-क्रियाओं आदि से ईश्वर की प्राप्ति का कोई सम्बन्ध नहीं है। इससे लाभ तो होता नहीं है समय व धन आदि की हानि अवश्य होती है तथा कुपात्रों द्वारा शोषण का शिकार बनना पड़ता है। अतः प्रत्येक मनुष्य को बहुत ही विचार कर ईश्वर की प्राप्ति हेतु अपनी उपासना पद्धति निश्चित करनी चाहिये। वैदिक विधि से उपासना करने से मनुष्य जीवन भर सन्तोष प्राप्त होता है और अन्य विधि से की गई उपासना लाभ से रहित व जन्म-जन्मान्तरों में दुःख का हेतु बन सकती है व बनती है। आईये, वेदाचरण करते हुए जप, ध्यान व उपासना कर हृदय में स्थित जीवात्मा में ईश्वर के साक्षात्कार करने का प्रयास करे। यह ध्यान रहे कि ईश्वर का साक्षात्कार हृदय में स्थित आत्मा में ध्यान करने से ही होगा, अन्य किसी विधि से कहीं कदापि नहीं होगा।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**